नईदुनिया

संपादकीय

पहले हम सुलझें, विवाद फिर सुलझाएँ, पर्यावरण बचाएँ

मध्यप्रदेश *में पर्यावरण की लड़ाई फाइलों में दम तोड़ रही है। एसआईए और पर्यावरण विभाग की कुर्सी की जंग में प्रदेश का भविष्य घुट रहा है। जिस महकमे के कंधों पर 8.30 करोड़ लोगों को स्वच्छ हवा, शुद्ध पानी और स्वस्थ वातावरण देने की जिम्मेदारी है, वही आज ऑक्सीजन के लिए सरकार के दरवाजे पर गुहार लगा रहा है। स्टेट एनवायरमेंट इम्पैक्ट असेसमेंट अथॉरिटी (एसआईए) और पर्यावरण विभाग अब पर्यावरण बचाने के बजाय एक-दूसरे की फाइलें बचाने में उलझे हैं। एसआईए अध्यक्ष को सरकार को पत्र लिखकर कहना पड़ा कि विभाग के अधिकारी काम नहीं करने दे रहे। जब रखवाले ही अखाड़े में उतर जाएं, तो जंगल को कौन बचाएगा?*

मध्यप्रदेश को टाइगर स्टेट का गौरव यूं ही नहीं मिला। यह वनकर्मियों की मेहनत, वैज्ञानिकों के शोध और आम लोगों की भागीदारी का परिणाम है। लेकिन यदि नीति बनाने वाले ही निवेश और पर्यावरण की लड़ाई में उलझे रहेंगे, तो यह पहचान बचाना कठिन होगा। सरकार को समझना होगा कि पर्यावरण विभाग कोई सामान्य प्रशासनिक इकाई नहीं, बल्कि करोड़ों लोगों के फेफड़ों की सुरक्षा से जुड़ा विभाग है।

विवाद की जड़ भोपाल के बैरसिया की 21 एकड़ सरकारी जमीन है। एसआईए का आरोप है कि पर्यावरण विभाग ने वहां पेड़ काटने की अनुमति नियमों की अनदेखी कर दी, जबकि विभाग सभी प्रक्रियाओं को वैध बता रहा है। 39 मामलों में अनुमति देने को लेकर भी सवाल उठाए गए हैं। यह लड़ाई पेड़ और परियोजना की नहीं, बल्कि अधिकार और अहंकार की बन गई है। परिणाम यह है कि न पर्यावरण सुरक्षित है और न निवेश का माहौल।

प्रदेश के कई शहरों में वायु गुणवत्ता सूचकांक लगातार चिंताजनक स्तर पर पहुंच रहा है। नदियों का जलस्तर घट रहा है और वन्यजीवों का प्राकृतिक आवास प्रभावित हो रहा है। ऐसे समय में पर्यावरण संरक्षण से जुड़े संस्थानों का आपसी टकराव पूरे तंत्र पर सवाल खड़े करता है। जनता जानना चाहती है कि जब विभाग अपना ही समन्वय नहीं बचा पा रहा, तो प्रदेश का पर्यावरण कैसे बचाएगा।

अब समय आरोप-प्रत्यारोप का नहीं, स्पष्ट जवाबदेही का है। सरकार को तत्काल यह तय करना चाहिए कि अंतिम अनुमति का अधिकार किसके पास होगा और संस्थागत भ्रम समाप्त किया जाए। विवादित मामलों की स्वतंत्र जांच कराई जाए और दोषी पाए जाने वाले अधिकारियों पर कड़ी कार्रवाई हो। साथ ही, पर्यावरण संरक्षण की सफलता का आकलन केवल फाइलों से नहीं, बल्कि कटे और लगाए गए पेड़ों, वायु गुणवत्ता और पारदर्शी निर्णय प्रक्रिया के आधार पर किया जाना चाहिए। पर्यावरण की रक्षा अहंकार से नहीं, समन्वय और जवाबदेही से ही संभव है।

पिछले लंबे समय से दोनो विभाग अपना मूल काम छोड़कर एक-दूसरे की कमियाँ बताने एवं सिकवे शिकायत करने में व्यस्त हैं। सैकड़ों फाइले सिर्फ इस लिए पेंडिंग है कि किसका क्षेत्राधिकार है, यही तय नहीं हो पा रहा है। सत्ता के शीर्ष प्रशासनिक मुखिया से कई बार शिकायतें हो चुकी हैं, परन्तु समाधान अब तक नहीं हो पाया है। दोनों के आपसी संघर्ष का दुष्परिणाम आम जनता भुगत रही है। मुख्यमंत्री एवं मुख्य सचिव स्तर पर इस मामले को जल्द से जल्द संज्ञान में लेकर निराकरण की पहल प्रदेश की साढ़े आठ करोड़ जनता के लिए स्वच्छ पर्यावरण उपलब्ध कराने में सहायक होगी।

आजकल

एक साल, 260 चिताएँ - जवाब शून्य

अहमदाबाद विमान हादसे की फाइल पर जमी सरकारी धूल, कब खुलेगा मौत का ब्लैक बॉक्स?

12 जून 2025 को अहमदाबाद से लंदन के लिए उड़ी एयर इंडिया की फ्लाइट एआई-171 टेकऑफ के महज 32 सेकंड बाद काल बन गई। 242 यात्रियों और क्रू सदस्यों में से 241 तथा जमीन पर 19 लोगों सहित कुल 260 बेगुनाहों की जान चली गई। हादसे की पहली बरसी पर परिजनों के हाथों में फूल हैं, आंखों में आंसू हैं और जुबान पर एक ही सवाल है - आखिर उनका अपना क्यों मरा? दुखद यह है कि नागर विमानन मंत्रालय और विमान दुर्घटना जांच ब्यूरो (एएआईबी) के पास एक साल बाद भी कोई स्पष्ट जवाब नहीं, केवल 'जांच जारी है' का घिसा-पिटा आश्वासन है।

260 परिवार आज भी सच का इंतजार कर रहे हैं। श्रद्धांजलि सभाओं से जख्म नहीं भरते, जख्म सच और जवाबदेही से भरते हैं। एएआईबी की प्रारंभिक रिपोर्ट के अनुसार उड़ान भरते ही बोइंग 787-8 ड्रीमलाइनर के दोनों इंजन के फ्यूल स्विच रन से कटऑफ पर चले गए। कॉकपिट वॉयस रिकॉर्डर में एक पायलट दूसरे से पूछता है, 'क्या तुमने स्विच बंद किया?' जवाब मिलता है, 'नहीं।' इसके बाद तीन बार मेडे कॉल दी गई, लेकिन विमान मेडिकल कॉलेज के हॉस्टल पर जा गिरा।

सवाल यह है कि दोनों फ्यूल स्विच एक साथ कैसे बंद हुए? तकनीकी खराबी थी, रखरखाव में चूक थी या मानवीय भूल? ब्लैक बॉक्स का डेटा मिलने के बावजूद अंतिम रिपोर्ट अब तक सार्वजनिक क्यों नहीं हुई? अंतरराष्ट्रीय नियमों के अनुसार एक वर्ष के भीतर अंतिम रिपोर्ट या कम से कम विस्तृत अंतरिम रिपोर्ट जारी होनी चाहिए, लेकिन अब तक केवल अटकलें ही सामने आई हैं।

सरकार ने मुआवजा दिया है, पर परिजनों को धन नहीं, सच चाहिए। अब समय लीपापोती का नहीं, जवाबदेही का है। एएआईबी को स्पष्ट करना होगा कि हादसे का वास्तविक कारण क्या था, किसकी जिम्मेदारी थी और भविष्य में ऐसी त्रासदी रोकने के लिए क्या कदम उठाए जाएंगे। यदि आवश्यकता हो तो अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञ एजेंसियों की मदद ली जाए। 260 मौतों का सच फाइलों की धूल में दबा नहीं रहना चाहिए।

2030 में इतिहास बन जाएगी अंतरिक्ष की सबसे बड़ी प्रयोगशाला

आईएसएस की प्रशांत महासागर में समाधि, पीछे छूटेगी 25 साल की विरासत और नए सवाल

पृथ्वी से 400 किलोमीटर ऊपर बीते 25 सालों से लगातार चक्कर लगा रहा इंसान का सबसे बड़ा अंतरिक्ष घर अब अपने अंतिम दौर में है। इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन (आईएसएस) को 2030 तक रिटायर कर प्रशांत महासागर के पॉइंट नीमो नाम के सबसे दूरस्थ हिस्से में गिरा दिया जाएगा। नासा ने इसकी आधिकारिक पुष्टि कर दी है। 1.5 लाख किलो वजन और फुटबॉल मैदान जितने बड़े इस ढांचे का अंत अंतरिक्ष युग के एक अध्याय का अंत होगा।

आसमान से समंदर तक एक नई शुरुआत-आईएसएस का गिरना दुखद है, परंतु जरूरी भी है। कोई भी मशीन अमर नहीं होती। 25 साल में इसने हमें सिखाया कि साथ मिलकर नामुमकिन को मुमकिन बनाया जा सकता है। इसने युद्ध के दौर में भी शांति का पुल बनाया। 2030 में जब आईएसएस का आखिरी टुकड़ा प्रशांत महासागर में समाएगा, तो वह असफलता का प्रतीक नहीं होगा, बल्कि इस बात का सबूत होगा कि इंसान ने धरती की सीमा छोड़कर तारों के बीच घर बनाया था और अब वह उस घर से निकलकर चांद, मंगल और उससे आगे की बस्तियां बसाने जा रहा है। आईएसएस जा रहा है, परंतु उसने जो रास्ता दिखाया है, उस पर अब पूरी दुनिया चल पड़ी है। भारत को भी उस दौड़ में सबसे आगे होना है, क्योंकि अंतरिक्ष अब सिर्फ रोमांच नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था, सुरक्षा और भविष्य का भी विषय है।

एक फुटबॉल मैदान जितने बड़े आईएसएस का सफर कैसे शुरू हुआ-आईएसएस कोई एक देश की उपलब्धि नहीं है। यह 15 देशों का साझा सपना है। अमेरिका, रूस, जापान, कनाडा और यूरोपीय स्पेस एजेंसी ने मिलकर इसे 1998 में बनाना शुरू किया। पहला मॉड्यूल 'जारिया' रूस ने भेजा, फिर अमेरिका का 'यूनिटी' मॉड्यूल उससे जुड़ा। 2000 में पहली बार तीन अंतरिक्ष यात्री इसमें रहने गए। तब से आज तक यह एक भी दिन खाली नहीं रहा। 6 से 8 अंतरिक्ष यात्री हर समय इसमें मौजूद रहते हैं। अब तक 19 देशों के 270 से ज्यादा यात्री यहां रह चुके हैं। इन्होंने 3,300 से ज्यादा वैज्ञानिक प्रयोग किए। कैंसर की दवा से लेकर जल शुद्धिकरण तक और पौधों के उगने से लेकर हड्डियों के घनत्व तक हजारों खोजों ने धरती पर हमारी जिंदगी बदली। आईएसएस ने साबित किया कि दुश्मन देश भी विज्ञान के लिए साथ आ सकते हैं। अमेरिका-रूस के तनाव के बावजूद दोनों ने स्टेशन को चालू रखा।

क्यों गिराना जरूरी, बूढ़ा हो रहा है अंतरिक्ष का घर-आईएसएस को 15 साल के लिए डिजाइन किया गया था, परंतु यह 25 साल तक चल चुका है। अब इसकी हालत खराब हो रही है। दीवारों में छोटी दरारें, हवा रिसने की घटनाएं, सोलर पैनलों की क्षमता घटना और कंप्यूटर सिस्टम का पुराना पड़ना अब सामान्य बात हो गई है।नासा का अनुमान है कि 2030 के बाद इसे चलाना बेहद खतरनाक और महंगा हो जाएगा। रखरखाव का सालाना खर्च 4.5 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच चुका है। 2028 के बाद रूस भी अपने मॉड्यूल अलग कर लेगा। इसलिए सभी साझेदार देशों ने मिलकर इसे नियंत्रित तरीके से गिराने का फैसला किया है। इसे ऐसे ही नहीं छोड़ा जा सकता। अगर नियंत्रण खो गया, तो 420 टन का मलबा कहीं भी गिर सकता है। इसलिए स्पेसएक्स का एक विशेष ड्रैगन यान आईएसएस को धक्का देकर पृथ्वी के वायुमंडल में लाएगा। इसका ज्यादातर हिस्सा जल जाएगा और बचा हुआ मलबा पॉइंट नीमो में गिराया जाएगा। यह प्रशांत महासागर का वह हिस्सा है, जो आबादी से सबसे दूर है। इसे 'स्पेसक्राफ्ट कब्रिस्तान' भी कहा जाता है। 1971 से अब तक 260 से ज्यादा सैटेलाइट और अंतरिक्ष स्टेशन यहां दफन हो चुके हैं।

9500 करोड़ की विरासत, आईएसएस ने दुनिया को क्या दिया-आईएसएस पर लगभग 9500 करोड़ रुपये खर्च हुए, परंतु इसने जो लौटाया उसकी कीमत लगाना मुश्किल है। माइक्रोग्रैविटी में प्रोटीन क्रिस्टल उगाकर अल्जाइमर और पार्किंसन की नई दवाओं के विकास में मदद मिली। अंतरिक्ष में शरीर कैसे बदलता है, यह समझकर उम्र बढ़ने की प्रक्रिया पर महत्वपूर्ण शोध हुए। पानी को 98 प्रतिशत तक रीसाइकिल करने वाली तकनीक आईएसएस से आई। आज वही प्रणाली सूखाग्रस्त इलाकों में काम आ रही है। हवा साफ करने वाले फिल्टर, रोबोटिक हाथ तथा हल्के लेकिन मजबूत मटेरियल जैसी कई तकनीकें आईएसएस की देन हैं। शीत युद्ध के दुश्मन रहे अमेरिका और रूस ने 25 साल तक कंधे से कंधा मिलाकर काम किया। इससे यह साबित हुआ कि अंतरिक्ष में कोई सीमा नहीं होती।

आईएसएस से अंतरिक्ष यात्रियों ने लाखों बच्चों से सीधी बातचीत की। पृथ्वी कितनी नाजुक दिखती है, यह संदेश देकर उन्होंने पूरी पीढ़ी को पर्यावरण के प्रति जागरूक किया।

2030 के बाद क्या निजी स्पेस स्टेशन का दौर-आईएसएस का जाना एक युग का अंत है, परंतु अंतरिक्ष में इंसान की मौजूदगी का नहीं। नासा अब खुद स्टेशन नहीं बनाएगा, बल्कि 'किराए पर स्टेशन' लेगा। एक्सिओम स्पेस, ब्लू ओरिजिन और नैनोरैक्स जैसी निजी कंपनियां 2028 से 2030 के बीच अपने स्पेस स्टेशन लॉन्च करने की तैयारी में हैं।

भारत भी पीछे नहीं है। इसरो 2035 तक अपना भारतीय अंतरिक्ष स्टेशन बनाने की तैयारी कर रहा है। 2025 में गगनयान मिशन के तहत भारतीय यात्री अंतरिक्ष जाएंगे। रूस और चीन मिलकर आईएलआरएस नाम का मून बेस बना रहे हैं। यानी भविष्य एक बड़े स्टेशन का नहीं, बल्कि कई छोटे स्टेशनों का है।

भारत के लिए सबक और अवसर-आईएसएस में भारत सीधा साझेदार नहीं था, परंतु हमारे वैज्ञानिकों ने इसके डेटा का इस्तेमाल किया। 2023 में राकेश शर्मा के बाद भारतीय अंतरिक्ष यात्री शुभांशु शुक्ला एक्सिओम-4 मिशन से आईएसएस गए। उन्होंने वहां मेथी और मूंग उगाने का प्रयोग किया। 2030 में जब आईएसएस गिरेगा, तो लो-अर्थ ऑर्बिट में एक खालीपन आएगा। भारत के पास अवसर है कि वह अपने अंतरिक्ष स्टेशन से उस जगह को भरे। इसके लिए जरूरी है कि हम स्पेस बजट बढ़ाएं, निजी कंपनियों को जोड़ें और गगनयान मिशन को समय पर पूरा करें।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

ईरान-इजरायल युद्ध की चिंगारी से भारत की थाली तक आग

ड्राई फ्रूट्स पर मंडराया महंगाई का संकट, 5 फीसदी मुनाफे के लिए जूझते कारोबारी

त्योहारों की रौनक, शादी-ब्याह की शान और सेहत का खजाना कहे जाने वाले ड्राई फ्रूट्स अब आम आदमी की पहुंच से दूर होते जा रहे हैं। वजह है ईरान और इजरायल के बीच छिड़ा युद्ध। पश्चिम एशिया में बढ़ते तनाव ने अमेरिका से लेकर अफगानिस्तान तक ड्राई फ्रूट्स की सप्लाई चेन को हिला दिया है। नतीजा, ग्वालियर से लेकर इटली तक 7,200 कंटेनर फंसे पड़े हैं। डॉलर का भाव 90 रुपये से बढ़कर 95 रुपये तक पहुंच गया है और कारोबारियों का मुनाफा 5 फीसदी पर सिमट गया है।

मेवे की मिठास में घुला भू-राजनीति का जहर-ईरान-इजरायल की लड़ाई हजारों किलोमीटर दूर है, परंतु उसकी तपिश ग्वालियर के बाजार तक पहुंच गई है। ड्राई फ्रूट्स सिर्फ शौक नहीं, सेहत हैं। बच्चों की ग्रोथ, बुजुर्गों की ताकत और गर्भवती महिलाओं का पोषण इनसे जुड़ा है। जब 5 फीसदी मुनाफे के लिए कारोबारी जूझ रहा हो और 37 फीसदी महंगाई से ग्राहक परेशान हो, तो समझिए कि सप्लाई चेन सिर्फ इकोनॉमिक्स नहीं, नेशनल सिक्योरिटी का भी मुद्दा है। भारत को खाद्य तेल में जो गलती हुई, वह ड्राई फ्रूट्स में नहीं दोहरानी चाहिए। युद्ध रुकने तक दाम कम नहीं होंगे, परंतु तब तक मेक इन इंडिया को ग्रो इन इंडिया तक ले जाना होगा। कश्मीर से कन्याकुमारी तक बादाम और अखरोट के बाग लगाने होंगे, वरना हर त्योहार पर हम यही खबर पढ़ेंगे कि यह अब आराम का मामला है और आम आदमी की थाली से मेवा गायब होता रहेगा।

युद्ध का गणित : 7,200 कंटेनर और 200 करोड़ का माल फंसा-भारत दुनिया में ड्राई फ्रूट्स का सबसे बड़ा आयातक है। बादाम का 90 फीसदी हिस्सा अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया से, पिस्ता ईरान और अमेरिका से तथा अखरोट अफगानिस्तान और चिली से आता है। इजरायल-ईरान तनाव ने होर्मुज जलडमरूमध्य और लाल सागर के मार्ग को खतरनाक बना दिया है। ग्वालियर, दिल्ली और मुंबई के आयातकों के करीब 7,200 कंटेनर समुद्र में फंसे हैं। इनमें बादाम, पिस्ता, अंजीर, किशमिश और अखरोट सहित 200 करोड़ रुपये से अधिक का माल है। शिपिंग कंपनियों ने 'वॉर रिस्क सरचार्ज' लगा दिया है। पहले जो कंटेनर 3-4 महीने में आता था, अब 5-6 महीने लग रहे हैं। किराया 40 फीसदी तक बढ़ गया है। इंश्योरेंस कंपनियां खाड़ी देशों से आने वाले माल पर कवर देने से कतरा रही हैं।

डॉलर का झटका : 90 से 95 का सफर और टूटता कारोबार-3-4 महीने पहले जब विदेशी ऑर्डर बुक किए गए थे, तब डॉलर 90 रुपये के आसपास था। भुगतान अब करना है और डॉलर 95 रुपये को छू रहा है। यानी हर डॉलर पर 5 रुपये का सीधा घाटा। ग्वालियर के एक बड़े आयातक का दर्द समझिए। उसने 1 लाख डॉलर का पिस्ता मंगाया। बुकिंग के समय कीमत 90 लाख रुपये थी, लेकिन आज भुगतान करने पर 95 लाख रुपये देने होंगे। माल अभी मिला नहीं और 5 लाख रुपये का नुकसान पहले ही हो गया। छोटे कारोबारी तो बर्बादी के कगार पर हैं। उनका कहना है कि सैंडस्टोन की तरह उनका धंधा भी चटक रहा है। पहले ड्राई फ्रूट्स पर 12 से 15 फीसदी मुनाफा मिलता था, अब खर्च बढ़ने और डॉलर महंगा होने से मुनाफा 5 फीसदी पर आ गया है। कई कारोबारी अब दुकान बंद करने की सोच रहे हैं।

थाली से गायब होता मेवा, आम आदमी पर दोहरी मार-ईरान और अमेरिका से सप्लाई प्रभावित होने का असर सीधे रिटेल बाजार पर दिख रहा है। पिछले दो महीनों में दाम तेजी से बढ़े हैं।

बादाम (अमेरिकी) : 800 रुपये से बढ़कर 1050 रुपये (31 फीसदी वृद्धि)

पिस्ता (ईरानी) : 1600 रुपये से बढ़कर 2200 रुपये (37 फीसदी वृद्धि)

अखरोट गिरी : 1200 रुपये से बढ़कर 1500 रुपये (25 फीसदी वृद्धि)

अंजीर : 1100 रुपये से बढ़कर 1400 रुपये (27 फीसदी वृद्धि)

त्योहारों का सीजन सिर पर है। रक्षाबंधन, जन्माष्टमी और फिर दिवाली आने वाली है। हलवाई, नमकीन वाले और गिफ्ट पैक बनाने वाले सभी परेशान हैं। 500 रुपये का डिब्बा अब 700 रुपये में पड़ रहा है। मध्यम वर्ग ने बादाम और अखरोट खरीदना कम कर दिया है। गरीब के लिए तो यह अब वास्तव में आराम का मामला बन गया है।

विकल्प की तलाश : अफगानिस्तान से आस, पर राह मुश्किल-जब ईरान का रास्ता बंद हुआ तो कारोबारी अफगानिस्तान की ओर बढ़े। कंधार और काबुल से अखरोट और अंजीर आता है, परंतु वहां तालिबान शासन के कारण बैंकिंग चैनल बाधित हैं। हवाला के जरिए भुगतान करना पड़ता है, जो जोखिम भरा है। पाकिस्तान के रास्ते माल लाना भी अब महंगा और असुरक्षित हो गया है। ऑस्ट्रेलिया और चिली से बादाम और अखरोट मंगाने की कोशिश हो रही है, लेकिन वहां का माल 20 फीसदी महंगा है। कैलिफोर्निया में सूखे की वजह से बादाम का उत्पादन 15 फीसदी घटा है। यानी दुनिया भर में सप्लाई कम और मांग ज्यादा है। काजू में भारत आत्मनिर्भर है, परंतु बादाम और पिस्ता का कोई घरेलू विकल्प नहीं है। कश्मीर और अफगानिस्तान के अखरोट की गुणवत्ता अलग है और मात्रा भी सीमित है।

सरकार से तीन उम्मीदें, बाजार से दो सबक-सरकार को ईरान और यूएई के साथ रुपया-रियाल ट्रेड मैकेनिज्म मजबूत करना चाहिए, ताकि डॉलर पर निर्भरता घटे और करेंसी का झटका कम लगे। शिपिंग और इंश्योरेंस पर सब्सिडी देकर युद्ध क्षेत्र से आने वाले खाद्य पदार्थों पर वॉर रिस्क इंश्योरेंस का 50 फीसदी भार सरकार वहन कर सकती है। साथ ही, नाफेड और मदर डेयरी जैसे संस्थानों के माध्यम से बफर स्टॉक बनाया जाए तथा प्याज-टमाटर की तरह ड्राई फ्रूट्स के लिए भी प्राइस स्टेबलाइजेशन फंड बनाया जाए।कारोबारियों के लिए भी यह सबक है कि सिर्फ एक देश पर निर्भरता खतरनाक है। उन्हें अमेरिका और ईरान के साथ-साथ चिली, तुर्की और उज्बेकिस्तान जैसे देशों से भी व्यापारिक संबंध विकसित करने होंगे। फ्यूचर कॉन्ट्रैक्ट और करेंसी हेजिंग को अपनाना समय की जरूरत है। यदि डॉलर 90 रुपये पर बुक किया था तो 95 रुपये के जोखिम को पहले ही हेज करना चाहिए था। छोटे व्यापारियों को भी यह सीखना होगा। मेवे की मिठास में घुला भू-राजनीति का यह जहर हजारों किलोमीटर दूर छिड़े युद्ध की देन है, लेकिन इसकी तपिश भारत के बाजारों तक महसूस की जा रही है। युद्ध रुकने तक कीमतों में राहत की उम्मीद कम है। ऐसे में मेक इन इंडिया को ग्रो इन इंडिया तक ले जाना होगा। कश्मीर से कन्याकुमारी तक बादाम और अखरोट के बाग लगाने होंगे, वरना हर त्योहार पर आम आदमी की थाली से मेवा और दूर होता जाएगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आजादी के नाम पर गुलामी

पाकिस्तान के कब्जे वाले जम्मू-कश्मीर (पीओजेके) की फिजा में इन दिनों सिर्फ एक ही नारा गूंज रहा है-'हमें इंसाफ चाहिए।' जेएएससी यानी ज्वाइंट अवामी एक्शन कमेटी के आह्वान पर पूरे इलाके में बाजार बंद हैं, सड़कें सूनी हैं और सरकार के खिलाफ गुस्सा चरम पर है। मुजफ्फराबाद से लेकर कोटली और रावलाकोट तक दुकानों के शटर गिरे हैं, परिवहन ठप है और आम आदमी हाथ में तिरंगा नहीं, बल्कि रोटी, कपड़ा और मकान की मांग वाली तख्तियां लेकर सड़कों पर है। पाकिस्तान दुनिया के मंचों पर कश्मीर का राग अलापता है, लेकिन अपने ही कब्जे वाले हिस्से में आवाम की आवाज बूटों से कुचल रहा है। पीओजेके आज 'आजाद कश्मीर' नहीं, बल्कि 'बेबस कश्मीर' बन चुका है।

1947 में कबायली हमलावरों की आड़ में पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर के इस हिस्से पर अवैध कब्जा किया और नाम दिया 'आजाद जम्मू-कश्मीर', लेकिन 75 वर्षों में आजादी के नाम पर वहां की जनता को केवल गुलामी मिली। मंगला डैम से लेकर नीलम-झेलम हाइड्रो प्रोजेक्ट तक बिजली पीओजेके में बनती है, लेकिन रोशनी लाहौर और इस्लामाबाद को मिलती है।

पीओजेके के शहर 18 से 20 घंटे अंधेरे में डूबे रहते हैं। आटा 200 रुपये किलो, बिजली का बिल 30 से 40 हजार रुपये प्रतिमाह, बेरोजगारी 50 प्रतिशत से अधिक और ऊपर से नए-नए करों का बोझ। स्कूल और अस्पताल बदहाल हैं, सड़कें गड्ढों में तब्दील हैं। जनता पूछ रही है - हमारा पानी, हमारी बिजली और हमारी जमीन पर हक पाकिस्तान का क्यों?

जेएएससी का आंदोलन इसी आर्थिक भेदभाव के खिलाफ है। 11 मई 2024 को मुजफ्फराबाद में पुलिस फायरिंग में चार युवकों की मौत के बाद यह चिंगारी शोले में बदल गई। अब मांग सिर्फ बिजली बिल में राहत की नहीं है, बल्कि लोग कह रहे हैं - हमें सब्सिडी नहीं, हमारा अधिकार चाहिए। 1947 के समझौतों के अनुरूप स्वायत्तता चाहिए। पीओजेके के प्रदर्शनकारियों के बीच एक नारा बार-बार सुनाई देता है-'देखो उधर का कश्मीर।' अनुच्छेद 370 हटने के बाद भारत का जम्मू-कश्मीर तेजी से बदल रहा है। निवेश बढ़ा है, पर्यटन नए रिकॉर्ड बना रहा है, आधारभूत ढांचे का विस्तार हुआ है और विकास की नई संभावनाएं खुली हैं। दूसरी ओर पीओजेके में न निवेश है, न पर्यटन, न स्थिरता। वहां केवल सेना, आईएसआई और आतंकवादी ढांचे की मौजूदगी दिखाई देती है। भारत में जी-20 जैसे अंतरराष्ट्रीय आयोजन होते हैं, जबकि पीओजेके में लोग आटे और बिजली के लिए संघर्ष कर रहे हैं। एक ओर लोकतंत्र है, दूसरी ओर सैन्य नियंत्रण।

इस्लामाबाद दशकों से 'कश्मीर बनेगा पाकिस्तान' का नारा देता रहा, लेकिन आज पीओजेके के लोग कह रहे हैं - पहले पीओजेके को तो पाकिस्तान जैसा बना दो। पाकिस्तान के पंजाब में मोटरवे हैं, जबकि पीओजेके में टूटी सड़कें हैं। लाहौर में मेट्रो है, लेकिन मुजफ्फराबाद में घंटों बिजली गुल रहती है। पाकिस्तानी सेना के लिए पीओजेके केवल एक रणनीतिक बफर है। यहां के लोगों को नागरिक नहीं, बल्कि सामरिक संसाधन समझा गया। बांध बने, लेकिन रॉयल्टी नहीं मिली; खनिज निकाले गए, लेकिन रोजगार नहीं मिला। अब जब जनता हिसाब मांग रही है, तो जवाब में रेंजर, अर्धसैनिक बल और गोलियां मिल रही हैं।

इसी बीच भारतीय सेनाध्यक्ष जनरल उपेंद्र द्विवेदी ने जम्मू-कश्मीर में उत्तरी कमान का दौरा कर स्पष्ट संकेत दिया है कि भारत हर गतिविधि पर नजर रखे हुए है। महत्वपूर्ण यह है कि भारत ने कोई उकसाने वाली कार्रवाई नहीं की, बल्कि पीओजेके की जनता ने स्वयं पाकिस्तान की नीतियों को कटघरे में खड़ा कर दिया है। जो पाकिस्तान दुनिया से कहता था कि कश्मीरी भारत से आजादी चाहते हैं, आज उसी के कब्जे वाले क्षेत्र के लोग पाकिस्तान से आजादी और अधिकारों की मांग कर रहे हैं।

आगे की तस्वीर तीन संभावनाएं दिखाती है। पहली, पाकिस्तान बल प्रयोग से आंदोलन दबाने का प्रयास करेगा, लेकिन भूख और अपमान की आग लंबे समय तक दबाई नहीं जा सकती। दूसरी, आर्थिक पैकेज और सब्सिडी का प्रलोभन दिया जाएगा, जबकि जनता अब अस्थायी राहत नहीं, स्थायी अधिकार चाहती है। तीसरी, भारत अंतरराष्ट्रीय मंचों पर पीओजेके में मानवाधिकारों और लोकतांत्रिक अधिकारों का मुद्दा और मजबूती से उठा सकता है।

सबसे बड़ा विडंबना यह है कि जिस क्षेत्र का नाम 'आजाद जम्मू-कश्मीर' रखा गया, वहां न आजादी है, न जम्मू है और न कश्मीरियत। वहां है तो केवल पाकिस्तान की सैन्य मौजूदगी, चीन का कर्ज और आम जनता की लाचारी। जेएएससी का आंदोलन इस बात का संकेत है कि बंदूक की नोक पर लिखी गई इबारतें हमेशा कायम नहीं रहतीं। पाकिस्तान ने जिस कश्मीर को जन्नत बताया, उसी हिस्से को उसने अपने शासन में जहन्नुम बना दिया है। पीओजेके की सड़कें आज सिर्फ बाजार बंद होने से सूनी नहीं हैं, बल्कि इसलिए सूनी हैं क्योंकि वहां से इंसाफ, रोजगार और उम्मीद तीनों गायब हैं।

भारत के लिए यह अवसर केवल घटनाक्रम देखने का नहीं, बल्कि लोकतंत्र और सैन्य वर्चस्व के अंतर को दुनिया के सामने स्पष्ट करने का भी है। जब पीओजेके का आम नागरिक भारत जैसे अधिकारों की बात करता है, तो यह स्वयं एक बड़ा राजनीतिक संदेश बन जाता है। आखिर जिस पाकिस्तान से अपना कब्जे वाला हिस्सा नहीं संभल रहा, वह श्रीनगर के सपने किस आधार पर देखता है? पीओजेके की सड़कों पर गिरा हर आंसू इस्लामाबाद के दावों पर एक करारा तमाचा है, जिसकी गूंज रावलपिंडी से लेकर जिनेवा तक सुनाई दे रही है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)